प्रतिहिं

इस सं
से कई
है। 'म
कहानी
के प्रति

इस सं
जो सा
शासन
कहती
नरसंह
का प
शिख
के अ
करतं
लिखं
इसी

इस
भार
व्यव
ढंग

विकास पेपर बैक्स
सेन रोड, गांधी नगर, दिल्ली-110031

प्रतिहिंसा तथा अन्य कहानियाँ

मुद्राराक्षस

© लेखक

प्रकाशक
विकास पेपरबैक्स
IX/221, मेन रोड, गांधीनगर
दिल्ली-110031

प्रथम संस्करण
1992

मूल्य
पचास रुपये

मुद्रक
अजय प्रिंटर्स
शाहदरा, दिल्ली-110032

PRATIHINSA TATHA ANYA KAHANIYAN (Hindi)
by Mudrarakshas
Price : Rs. 50.00

अपने प्रिय साथी
विलायत जाफ़री को

मिराज घबराकर पीछे हट गया, "कोतवाल किसी और को बनाओ, मैं तो तुम्हारा गुण्डा हूँ।"

झोंपड़ियों की तोड़-फोड़ के खेल में अचानक पैदा हुए इस गतिरोध से सभी को खीज होने लगी। तभी ताड़ीवाले ठेकेदार के बड़े-से झोंपड़े से बाहर आकर लल्लू के बाप ने आवाज दी, "अबे ओ लल्लू !"

"क्या है ?"

"अबे जरा देख जाकर, रेढ़ेवाला रुल्दू कहाँ मर गया ! साले को बोल, ठेकेदार साहब बुला रहे हैं।" हुक्म देकर उसका बाप फिर अन्दर चला गया।

बाकी बच्चों ने निश्चय ही चैन की साँस ली होगी और लल्लू यह भाँप भी गया होगा, क्योंकि वह जाते-जाते बोला, "एक बात बता दूँ। मैं अभी आ रहा हूँ। इस बीच अगर किसी ने झोंपड़ियों को हाथ भी लगाया, तो समझ लेना।"

उसकी इस धमकी से सभी सकते में आ गए।

जाते-जाते लल्लू ने एक बार उन्हें फिर धमकाया और नाले के पुल की तरफ दौड़ गया।

उसके जाने के बाद बच्चों ने बस्ती की तरफ देखा। नन्हे छप्परों और छोटे-छोटे घरौंदोंवाली वह बस्ती सहसा अच्छी लगी। छोटे-छोटे खोखेवाली दूकानें और झोंपड़ियों के बीच की गलियाँ जैसे उनकी तरफ देखकर मुस्कराने लगीं।

"अबे रहने दो। इस साली को और सजायेंगे।" परमू ने कहा। बच्चे इस बात से तुरन्त सहमत हो गए।

"अबे हाँ," मिराज बोला, "यहाँ एक तख्त बनाकर डाल देते हैं बे। उसके आगे दरी बिछेगी। रात में यहाँ हीराबाई नाचेगी। क्यों बे ?"

"दिया लेते आना बे। उसकी गैस-बत्ती बना लेंगे। 'औरत का प्यार' खेल होगा बे। औरत का प्यार।"

वे एक बार फिर नये उत्साह से सींकों का तख्त बनाने में जुट गए। चुप रहनेवाला मिर्ची गाने लगा, "नहीं किसी ने दिया है तुमको ये अख्तियार, बिला खता जो इस तरह रैयत डालो मार···कुड़कुड़-कुड़कुड़ धुम···।"

एहसास

दुनिया का गहरा से गहरा अँधेरा भी कभी-कभी उन आँखों के सामने झीना पड़ जाता है जो उस वक्त कुछ भी देखने से इनकार करना चाहती हों। हमदम साहब अँधेरे के इस झीनेपन से डर रहे थे। अब उन्हें मृत्यु का नहीं, रोशनी का भय था। रात अभी मुश्किल से आधी बीती थी। नहर के किनारे उगे पतावर की लम्बी धनुषाकार पत्तियों का एक बड़ा गुच्छा उनकी आँखों और आकाश के बीच बहुत साफ उभर आया था जैसे काली रोशनीवाला कोई अनार छूटकर ठहर गया हो। हवा एकदम ठहरी हुई थी और हमदम साहब की निगाहें सिर्फ दो चीजें देख पा रही थीं, बारीक लम्बी तलवारों जैसी पतावर की काली पत्तियाँ और उनके पीछे किसी खाली पड़े सिनेमाघर के ठंडे परदे की तरह खिचा हुआ आसमान। अब उनका ध्यान गया, नीचे पानी है, टखने से ऊपर तक, उनके पाँव भिगोता हुआ। बहुत देर से ठहरी हुई या घुटी हुई साँस सहसा उनके फेफड़ों ने इस तरह खींची जैसे पानी में लम्बी डुबकी लगाकर आए हों और इसी साँस के साथ एक मितली उठी। इस बार पसलियों के दर्द से नहीं, न खौफ से। मितली एक दुर्गंध से उठी, खून की दुर्गंध, अपने खून की या दूसरों के खून की।

इस बीच शायद वे बेहोश हो गए थे क्योंकि अपनी पसलियों से लेकर कंधे और कान तक आग से जलाए जाने की जैसी तकलीफ वे फिर महसूस करने लगे। यह गनीमत थी कि अब वहाँ सिर्फ वह असह्य जलन ही थी वरना जिस वक्त उन्हें गोली लगी थी उस वक्त उन्हें ऐसा लगा जैसे किसी ने बहुत वजनी कुल्हाड़ी से उनका आधा हिस्सा चीर दिया हो और चीरने के बाद उनकी पसलियाँ मरोड़ रहा हो। तभी वे चीखे थे। बेसाख्ता। बहुत दर्दभरी आवाज में। अब उन्होंने गौर किया, क्या वे अकेले ही चीखे

थे? वहाँ तो बहुत लोग थे। अँधेरे में सही तादाद वे नहीं जान पाए थे लेकिन सौ-एक लोग तो रहे ही होंगे।

मौत से पहले आदमी के शरीर में शायद बहुत कुछ बदल जाता है जैसे उसकी आवाज। वह अपनी बोली बिल्कुल भूल जाता है। कोई शब्द उसे याद नहीं रहता। कान सुनना बन्द कर देते हैं। दहशत से थमकर खून इस कदर जोर से चीखता है कि कान बहरे हो जाते हैं। शायद यही कुछ हुआ हो। हमदम साहब के अलावा और लोग भी चीखे होंगे। पर उनकी आवाजें सुनाई नहीं दीं। याद नहीं पड़ता कि गोली की आवाज भी उन्होंने साफ-साफ सुनी हो।

उन्होंने हिलना चाहा। हिले नहीं। हिल नहीं पाए। लेकिन इतना सोचने भर से उन्हें लगा उनकी पसलियाँ कोई फिर मरोड़ रहा है, मरोड़कर उस जख्म से खिलवाड़ कर रहा है। एक दबी हुई कराह उनके गले से निकली लेकिन वे फौरन ही खामोश हो गए। थोड़े पल के खौफनाक सन्नाटे के बाद एक चीख और उभरी जैसे किसी का गला दबाया जा रहा हो। हमदम साहब इस बार और ज्यादा डर गए। उन्होंने ही कराहकर गलती की थी और अब अगर कोई और भी वहाँ जिन्दा है तो इस बुरी तरह चीखकर उसने तो कयामत ही बुला ली है। वे लौटेंगे और खोज-खाजकर गोली मारेंगे। हमदम साहब साँस रोककर दहशत से आँखें मूँदे देर तक इन्तजार करते रहे लेकिन गनीमत है कि दुबारा वहाँ कोई नहीं आया। खौफ फिर भी कम नहीं हुआ। वहाँ अँधेरा भी तो काफी नहीं था। अगर वे दुबारा आएँ और थोड़ा-सा गौर करें तो हमदम या उस चीखनेवाले दूसरे आदमी को खोज सकते हैं। मगर इससे ज्यादा भयावह स्थिति तो चार-पाँच घण्टे बाद आनेवाली थी। पर क्या तब तक जिन्दा रह पाना मुमकिन होगा? उन्होंने मायूस होकर गर्दन नीचे झुकाई और तीखी धारवाले पतावर की पत्तियों पर माथा टिका लिया। उनके दोनों बाजू सलीब पर लटकाए आदमी की तरह पतावर पर लंबे होकर उलझे हुए थे।

पतावर पर माथा टिकाए हुए उन पर अब एक गहरी मायूसी छाने लगी। या शायद नींद या नीम बेहोशी। खून की दुर्गंध अब इतनी तीखी और असह्य हो गई थी कि उन्हें लग रहा था जैसे वे लहू के दरिया के

किनारे डाल दिए गए हों। अपनी लाचारी पर उन्हें एकाएक रोना आ गया पर वे रो नहीं पाए। खुश्क हो गए गले में लकड़ी की फाँसें-सी चुभीं और आँखों में जलन होने लगी। न हिचकी आई न आँसू।

"खुदाया, ये क्या हुआ? आखिर मैंने किसी का क्या बिगाड़ा था?" होश में आने के बाद उनके कलेजे में पहली बार यह इबारत उभरी कि तभी वह आदमी फिर कराहा, ठीक उसी तरह जैसे उसका गला दबाया जा रहा हो। खून की तीखी बदबू के बीच यह आवाज—हमदम साहब को लगा जैसे उनके कानों के पास अपने बदबूदार दाँत चमकाती हुई मौत गुर्रा रही हो। अगर उनकी पसलियों की तकलीफ फिर न उभर आई होती तो जरूर वे मौत के उस दुर्गंधयुक्त काल्पनिक जबड़े से बचने के लिए पतावर से नीचे फिसल जाते। उन्होंने अपने दाँत सख्ती से भींचकर माथा पतावर पर और ज्यादा गड़ा लिया।

मौत के दाँतों की वह दुर्गंध दारोगा श्यामलाल को भी महसूस हुई। दो सिपाहियों के साथ वह साइकिल पर नहर के किनारे-किनारे चला आ रहा था। सिपाही आपस में ऊँची आवाज में बातें कर रहे थे। दारोगा ने दुबारा लम्बी साँस खींची। इस बार वह दुर्गंध महसूस नहीं हुई। उसे लगा यह वहम था। पर तभी एक सिपाही ने बातों का सिलसिला तोड़ दिया; "अबे, ये बदबू काहे की है बे!"

इसी वक्त दारोगा ने वह गंध फिर महसूस की, इस बार पहले से ज्यादा तेज।

"मरा जानवर कोई नहर में धकेल गया है।" मगर यह कहते-कहते दूसरा सिपाही भी सहम गया। तीनों को लगा यह दुर्गंध मरे जानवर की नहीं, ताजे खून की है। इसी बीच दूसरे आदमी के कराहने की आवाज आई। दारोगा को रात के उस सन्नाटे में झुरझुरी हो आई। तीनों ही सहसा साइकिलें रोककर उतर पड़े।

दारोगा ने कड़कती आवाज लगाई, "कौन है बे वहाँ? कौन है बे!"

जवाब में पहले से भी ज्यादा सहमा हुआ सन्नाटा छा गया।

"अबे कौन है, बोलता क्यों नहीं?" एक सिपाही ने टॉर्च जला ली।

"साहब, आवाज इधर नहर के किनारे से आती लगी थी।" दूसरा

सिपाही बोला।

अब उन्होंने महसूस किया, बदबू बहुत तेज है और उनके पैरों के करीब ही कहीं है। उन्हें यह भी लगा, जमीन आसपास खासी भीगी है। तभी पहला सिपाही लगभग चीख पड़ा, "साहब, लाश—लाशें—"

दारोगा ने अपनी टॉर्च की रोशनी नहर के ढाल पर घुमाई। उस बेहद तीखी रोशनी में नहर के पानी तक बहे खून में लिथड़ी हुई लाशें एक-दूसरे से उलझी हुई पड़ी थीं—दस, बीस, पचीस, पचास, सौ—इतनी लाशें और इतना खून उसने जिन्दगी में कभी नहीं देखा था। वह झटके से पलटा। लगा, वह चीखेगा, पर बगैर कोई आवाज निकाले वह ढाल से कूदकर ऊपर सड़क पर आ गया और तेजी से शहर की तरफ पैदल दौड़ पड़ा। वह इस तरह बेतहाशा दौड़ रहा था जैसे लाशों से हटकर मौत अपने खौफनाक पंजे उसकी तरफ उठाए हुए पीछे झपटती आ रही हो। नहर के आर-पार बने पुल से गुजरनेवाली चौड़ी सड़क पर आकर दौड़ने में उसे कुछ ज्यादा आसानी हुई। गोल चक्करवाले बड़े चौराहे से सीधे आगे बढ़कर उसकी चौकी थी। पर वह उधर नहीं गया। दाहिने मुड़कर दुबारा बाएँ एक पतली सड़क पर उतरकर वह उसी तरह दौड़ता रहा।

इसी सड़क के छोर पर पुलिस कप्तान का बड़ा-सा मकान था। मकान के फाटक के बाहर एक छोटी गुमटी थी पहरेदारों के लिए।

और कोई दिन होता तो दारोगा गुमटी पर खड़े सन्तरी से जरूर बात करता। उसे खुश करने के बाद वह कप्तान साहब के बारे में पूछता। लेकिन आज सहसा वहाँ अँधेरे को फाड़ता हुआ दारोगा प्रकट हुआ और छलाँग लगाकर फाटक के अन्दर हो गया।

बौखलाया हुआ सन्तरी चीखा, "अरे ए—"

कप्तान उस वक्त गाजियाबाद कला मंडल के एक नाटक समारोह से लौटा था। अभी उसने जीप से एक पैर बाहर लटकाया था कि वह अर्धविक्षिप्त दारोगा वहाँ पहुँच गया। जीप का सिपाही उछलकर दारोगा के पीछे आ खड़ा हुआ।

दारोगा कुछ बोला नहीं। उसने सिर्फ इस तरह एक यांत्रिक अभिवादन किया जैसे हथेली के पीछे से माथे का पसीना पोंछ रहा हो। हाथ सीधे

नीचे नहीं आया। लगा उसके जोड़ उखड़ गए हैं। वह झूल-सा गया। कप्तान ने उसे निगाह गड़ाकर घूरा, "क्या है?"

बहुत कोशिश के बाद दारोगा के गले से दो बार अस्पष्ट-सा एक शब्द निकला, "श्रीमान्···!" यह सम्बोधन इतना टूटा-फूटा था जैसे उसे बहुत देर से वह अपनी पसीजी हथेली में मुट्ठी बाँधकर दबाए रहा हो।

कप्तान बहुत जल्दी उस घबराहट को समझ गया। चौकी पर कोई हवालाती उसके हाथों मर गया है। थोड़ी सख्त लेकिन आश्वासन देती आवाज में उसने कहा, "ठीक से बोलो, बात क्या है?"

वह एक शब्द 'श्रीमान्' भी इस बार साफ नहीं निकला। वह कुछ इस तरह हिलने लगा जैसे उस पर कोई दौरा पड़नेवाला हो।

"हुआ क्या है, आराम से बताओ, तमाशा मत करो।" कप्तान ने कहा, "पानी पिओगे? पानी लाओ।"

सिपाही अन्दर की तरफ दौड़ गया, लेकिन सन्तरी उससे पहले ही एक पीतल का गिलास भर लाया।

दारोगा को सँभलने में ज्यादा ही वक्त लगा। तब तक दोनों सिपाही भी दारोगा की साइकिल लिए हुए फाटक पर आ खड़े हुए।

दारोगा ने लाशों का जो ब्योरा दिया उस पर कप्तान सहसा विश्वास नहीं कर पाया। उसने दारोगा को एक बार फिर गौर से देखा। दारोगा ने शराब नहीं पी हुई थी। भंग पीकर भी यह हालत नहीं हो सकती थी।

देर बाद दारोगा ने जो कुछ बताया उस पर कप्तान को सहसा विश्वास नहीं हुआ, "इतनी लाशें!"

"हाँ श्रीमान्, सैकड़ों।"

"कहाँ? कहाँ हैं लाशें?"

"बार्डर पर श्रीमान्। मेरठ-गाजियाबाद बार्डर पर नहर के अन्दर।"

"नहर के अन्दर? गाजियाबाद में?"

"हाँ सर।"

कप्तान झपटकर दफ्तरवाले कमरे में आया। उसके वायरलेस से शाँय-शाँय की कर्कश ध्वनि के साथ लगातार कहीं कोई सूचना भेजी जा रही थी, बहुत ऊँची आवाज में। कप्तान ने नियन्त्रण कक्ष को लाशों की सूचना दी

और लड़खड़ाते दारोगा को साथ लेकर नहर के किनारे चल दिया।

घबराहट में दारोगा उस जगह की शिनाख्त करना भूल गया था। अन्दाज से उसने जीप जहाँ रुकवाई वहाँ नहर के किनारे कुछ नहीं था। बहुत दूर तक फैले अँधेरे में झींगुरों की तीखी आवाज के अलावा और सब कुछ शान्त था। नहर में पानी बहुत थोड़ा और चुपचाप बह रहा था।

क्या उसने ख्वाब देखा था? वह भ्रम था? दारोगा बौखला गया। उसकी आवाज एक बार फिर गायब हो गई। करीब था कि इस दूसरे धक्के से वह बेहोश ही हो जाता कि एक कराह, कहीं दूर से आती हुई फिर सुनाई दी। इस बार जैसे कोई उलटी कर रहा हो।

उलटी हमदम साहब ही कर रहे थे। बहुत देर से घुटी हुई मितली उनके सूखे कंठ को चरचराहट के साथ फाड़कर अनायास बाहर आ गई थी। भयानक दुर्गंध और अपनी दुर्दशा की बेबसी के बाद इस घिनौनी प्रतिक्रिया के लिए वे कतई तैयार नहीं थे पर इसे भी उन्होंने स्वीकार कर लिया। मरोड़ के साथ पसलियों से लेकर कन्धों तक बढ़ गए दर्द से लड़ते हुए उन्होंने दुबारा स्वेच्छा से वमन करना चाहा। पर इस बार बहुत डरावनी गों-गों और बेबसी-भरी रिरियाहट के अलावा गले से कुछ भी बाहर न आया।

इसके बाद जिसका उन्हें डर था वही हुआ। बहुत-से भारी कदम दौड़ते हुए करीब आए। उनके साथ ही तुरन्त एक गाड़ी भी आ गई। कई टॉर्चों और जीप की बत्तियों से नहर के उस अँधेरे किनारे पर तेज और चकाचौंध दिलानेवाली रोशनी का जैसे एक विस्फोट-सा हुआ। पुलिस की वर्दियों की एक झलक-सी उन्हें दिखाई दी। गंदगी को भूलकर उन्होंने दाँत भींचे और माथा दुबारा पतावर में गड़ा लिया। लेकिन वे ज्यादा देर उस हालत में अपने को रख नहीं पाए। इस बार वे अपनी मृत्यु के समूचे आयोजन को ठीक से देख लेना चाहते थे।

"जिन्दा है।" एक आवाज आई। आवाज सुनकर सर्द पानी में और ज्यादा सर्द पड़े टखनों में एक थरथराहट हुई। मगर आँखें उन्होंने बन्द नहीं कीं। टॉर्च की रोशनी में बहुत फटी हुई उन आँखों को देखकर कप्तान उस तरफ झुका, "डरो नहीं, बाहर आओ।"

उसकी इस आवाज पर भी वे हिले नहीं। पलक तक नहीं झपकाई। उन्हें और नजदीक से देखने के लिए कप्तान ने एक पैर नहर के अन्दर के ढाल पर उतारा। पैर टिका नहीं। जैसे वहाँ चिकनी कीचड़ हो, इस तरह फिसल गया। कठिनाई से सँभलकर जब वह खड़ा हुआ तो उसने पाया, उसकी वर्दी, जूतों और हथेलियों पर जो लिपट गया है वह आधा, जमा गाढ़ा सुर्ख और कहीं-कहीं मिट्टी में मिलकर काला पड़ा खून है। और अब जीप की रोशनी में उसने देखा नहर के ढाल से लेकर पानी तक बहुत-सी लाशें एक-दूसरे में उलझी पड़ी हैं।

"ये हुआ क्या है?"

"श्रीमान्, गोलियाँ। इन्हें गोलियाँ लगी हैं।" एक सिपाही ने कहा।

वहाँ कुल अठहत्तर लाशें थीं। या छिहत्तर। दो अभी जिन्दा थे। उठाए जाते वक्त भी वे इन सिपाहियों को वैसे ही अविश्वास से आँखें फाड़कर घूर रहे थे। कप्तान को खून की दुर्गंध, लाशों और घायलों को अस्पताल पहुँचाने के बाद महसूस हुई। दो बड़े दारोगा वहीं छोड़कर कप्तान घर लौट आया। वह जल्दी से जल्दी नहा लेना चाहता था। जिन्दगी में पहली बार वह पूरी वर्दी में नहाया। फव्वारे की बारीक तेज धारों में वर्दी के वे लाल-काले दाग देर तक कट-कटकर गिरते हुए वह देखता रहा। जिस वक्त नहाकर वह बाहर आया उसने महसूस किया उसे एक असाधारण सर्दी लग रही है।

जिन्दा बच गए दोनों आदमियों के जख्म ज्यादा घातक नहीं थे। हमदम साहब की ऊपर से दूसरी पसली और कंधे के बीच गोली लगकर तिरछा निकल गई थी। दूसरी पसली बुरी तरह टूट गई थी और बगल में बाँह के नीचे मांसपेशियाँ फटकर लटक गई थीं। खून जरूर ज्यादा बह गया था पर फेफड़े सही-सलामत थे। दूसरे आदमी के कूल्हे और जाँघ में दो गोलियाँ लगी थीं। दोनों को ऑपरेशन के बाद दूसरे दिन दोपहर तक होश आ गया।

कप्तान ने खुद बयान लिया। पहले दूसरे आदमी का। तकलीफ काफी कम हो गई थी पर बोलने में साँस थोड़ी उखड़ती थी पर वह जोश के साथ बयान देता रहा, "साहब, अल्लाह मालिक है, उसकी कसम खाकर कहता

हूँ, अगर मैंने कभी कोई असलहा जमा किया हो या—या दंगे-फसाद में हिस्सा लिया हो।"

"ठीक है, वो बाद की बात है। पहले यह बताओ नाम क्या है और कहाँ के रहनेवाले हो?" कप्तान ने पूछा।

"साहब, वही तो बताया। साहब, मैं तो गरीब आदमी, हमेशा अपने काम से काम रखता हूँ। उन्होंने बेकुसूर हमको गोली मारी।"

"भई नाम बताओ नाम!"

"अब्दुल रऊफ।"

"कहाँ रहते हो?"

"मलियाना में। सब्जी बाजार साहब। मैं वहाँ पंचर जोड़ता हूँ।"

"हुआ क्या था?"

"साहब, खुदा गवाह है—"

"है यार, तुम बात तो बताओ।" कप्तान थोड़ा अधीर होने लगा, "तुम नहर तक कैसे पहुँचे? किसने गोली मारी?"

"पी० ए० सी० ने साहब। पी० ए० सी० ने गोलियाँ मारकर बिछा दिया। मेरा कोई कुसूर नहीं था साहब, मगर उन लोगों ने हमको घेर लिया। सबको घेर लिया।"

"कहाँ घेर लिया?"

"हमारे घरों में। हजारों सिपाही थे पी० ए० सी० के। हमारा सारा सामान सड़क पर फेंक दिया। औरतों, बच्चों को बन्दूक के कुंदों से मारने लगे तब हम बक्सों के ढेर के पीछे से निकल आए। सब लोगों को बाहर इकट्ठा कर लिया। सारे मुहल्ले के जितने मर्द थे, बूढ़े, जवान, किसी को नहीं छोड़ा। सबको लेके शहर से बाहर आ गए। तब उनका अफसर बोला, यहाँ नहीं, गाजियाबाद ले चलो। बस साहब, नहर तक लाए, फिर सबको लाइन से खड़ा कर दिया और तड़ातड़ गोलियाँ चलाने लगे। साहब, एक-एक को भून दिया। एक-एक को। एक-एक को मार दिया साहब!" वह आदमी रोने लगा। कप्तान ने धीरे से उसका हाथ दबाया।

पूरा वाकया खौफनाक भी था और उलझन में डालनेवाला भी। सरेशाम लोगों को मलियाना में घरों से निकाला गया और गाजियाबाद की

सीमा में लाकर पी० ए० सी० ने उन्हें गोलियों से उड़ा दिया। अब्दुल रऊफ तादाद तीन-चार सौ बताता है पर अगर लाशें नहर में बही नहीं थीं तो दो घायलों सहित उनकी तादाद अठहत्तर थी।

दूसरा बयान हमदम साहब का था। पर देर तक वे कुछ नहीं बोले। कई बार पूछने पर अपना नाम और पता बता दिया और फिर चुप हो गए।

"क्या बहुत तकलीफ है?" हारकर कप्तान ने पूछा।

"नहीं हुजूर। अब तो काफी ठीक हूँ। बहुत बेहतर हूँ।" कहकर वे फिर चुप हो गए। अब वे कप्तान को नहीं छत को घूर रहे थे। जब शायद उनकी आँखें थक गईं तो उन्होंने पलकें मूँद लीं और बहुत धीरे से एक शे'र पढ़ा :

"दुनिया में ऐ जबाँ, रविशे सुलहे कुल न छेड़,
जिससे किसी को रंज हो ऐसा बयाँ न छेड़।"

यह शे'र पढ़ने के बाद वे फिर खामोश हो गए। बहुत-बहुत कोशिश करने के बाद भी वे नहीं बोले तो कप्तान निराश होकर उठ पड़ा। जब वह बाहर जाने लगा तो हमदम साहब ने दायाँ हाथ थोड़ा-सा उठाया और धीरे से आवाज दी, "सुनिए।"

कप्तान फौरन वापस आया, "कहिए!"

"आप तशरीफ रखें।"

"ठीक है। बैठ जाऊँगा। मैं चाहता हूँ आप बयान दे दें। क्या बहुत तकलीफ है?" कप्तान ने पूछा।

"हाँ। दिल में।" हमदम साहब धीरे से बोले, "जनाब, मैं अर्ज करूँ, इस मुल्क को किसी बहुत बड़ी साजिश का शिकार बनाया जा रहा है। मैं जानता हूँ, आप एक ईमानदार और सच्चे अफसर हैं। आप खुद जानते होंगे। इसी की तकलीफ है मेरे दिल में।"

"वो ठीक है मगर इस गोलीकांड के बारे में आप तफसील से हमें बताएँ।"

"गोलीकांड! जी हाँ। देखिए, इस वक्त हमारे मुल्क के वजीरे आजम जनाब राजीव गांधी साहब पर चारों तरफ से हमले हो रहे हैं। अपोजीशन जनाब, विदेशी ताकतों की कठपुतली बनकर हमारे वजीरे आजम को हटाना चाहता है। उनकी कोशिशें हैं जनाब कि मुल्क टूट जाय। इसीलिए

उन्होंने राजीव गांधी पर गंदे-गंदे इल्जामात लगाना शुरू कर दिया है। जनाब, आप तो जानते हैं, इतने बड़े खानदान के वारिस और सारे मुल्क के मालिक हैं वो, भला तोपों-पनडुब्बियों के कमीशन से उनका क्या बनता है जनाब।"

"सही है जनाब, लेकिन मैं जानना चाहता हूँ कि आप लोगों को गोलियाँ किसने मारीं?" कप्तान ने अपने धीरज को बटोरकर फिर पूछा।

"अल्लाह की मर्जी हुजूर, आप जैसा नेकदिल इन्सान बखूबी जानता है।" हमदम साहब ने थोड़ी साँस लेकर कमजोर आवाज में अपनी बात फिर शुरू की, "जनाब, लोग कहते हैं कि सूब-ए-उत्तर परदेश के वजीरे आला जनाब वीरबहादुर सिंह साहब ने, खुदा उन्हें लम्बी उम्र दे, मेरठ में दंगे करवा दिए, वो भी इसलिए कि बोफोर्स की तरफ से लोगों का ध्यान हट जाए और अम्नोकानून के नाम पर विशनाथ परतापसिंह के बागी जलसे रोके जा सकें। मैं पूछता हूँ हुजूर कि इसमें बुरा क्या था? आखिर ये सियासत है जनाब, कोई हँसी-खेल नहीं है। अगर इस मुल्क को टुकड़े होने से बचाने के लिए और अपने हरदिलअजीज राजीव गांधी साहब के हाथ मजबूत करने के लिए मेरठ से चन्द कुर्बानियाँ माँगी गईं तो बुरा क्या था? रिआया का फर्ज है वतन के लिए कुर्बानी देना। जनाब, शायर ने कहा है—सबसे पहले मर्द बन।"

कप्तान ने बेचैनी से बालों में उँगलियाँ घुसाईं और सिर को इस तरह झटका दिया जैसे बालों की गर्द झाड़ रहा हो फिर हल्की खीज के साथ बोला, "देखिए भाई, मैं जो पूछ रहा हूँ वो बताइए।"

"जी? बेहतर है। बेहतर है हुजूर।" हमदम साहब खासे ही निराश हो गए।

"क्या ये सच है कि आप लोगों को यहाँ लाकर पी० ए० सी० वालों ने गोली मारी?"

"जनाब, फिरकापरस्त और मुल्क को तोड़नेवाली ताकतें कहाँ नहीं हैं हुजूर। मैं अर्ज करना चाहता हूँ।"

कप्तान ने बहुत लम्बी साँस खींचकर कहा, "हमदम साहब, मेरा खयाल है अब आप आराम करिए।"

"जी? जी हाँ, जी हाँ। शुक्रिया।" हमदम साहब के चेहरे पर मायूसी और गहरी हो गई।

अस्पताल में उन्हें ज्यादा दिन नहीं लगे। कंधे से लेकर पसलियों के नीचे तक पलस्तर में लिपटे हुए वे बाहर आए और मेरठ जानेवाली बस पर बैठ गए। मलियाना तक पहुँचते-पहुँचते उन्होंने यह फैसला कर लिया था कि मलियाना में बीवी-बच्चों से मिलने के बाद वे जल्दी से जल्दी जनाब गवर्नर साहब से मुलाकात करेंगे। पी० ए० सी० के द्वारा छिहत्तर आदमियों की गाजियाबाद सीमा में हत्या को लेकर बहुत-से अखबारों ने शोर मचाना शुरू कर दिया था। इस मामले में उन्हें पहल करनी होगी, यह उनकी जिम्मेदारी है।

मलियाना वैसा ही नहीं था जैसा उन्होंने छोड़ा था बल्कि कहना चाहिए जैसा मलियाना उन्होंने जिया था। मलियाना की मुख्य सड़क पर सीमा के पासवाली पुलिया के ऊपर दोनों तरफ पी० ए० सी० के कुछ सिपाही बैठे थे। खड़खड़ेवाले ने उन्हें मलियाना से थोड़ा पहले दाहिनी ओर मुड़नेवाली सड़क के मोड़ पर उतार दिया था। वहाँ से पैदल रास्ता ज्यादा नहीं था। उन्हें कतई उम्मीद नहीं थी कि इस तरह कस्बा शुरू होते ही ये सिपाही उन्हें मिल जाएँगे। अनचाहे ही वे सहम गए। लेकिन अब पीछे लौटना भी मुमकिन नहीं था। उन्होंने अपने कलेजे को मजबूत किया और सधे कदम पुलिया की तरफ बढ़ चले।

वे अजब बदइख्लाक किस्म के सिपाही थे। बजाय इसके कि वे अपने काम से काम रखते, उन्होंने हमदम साहब को घूरना शुरू कर दिया। उन निगाहों से बिंधे हुए चलना ऐसा लगा जैसे उन्हें किसी ने तीरों से बेधकर उठा लिया हो। सिपाही शायद कौतुक के लिए ज्यादा उत्सुक थे। जब वे ठीक उनके बीचोबीच पहुँच गए तब एक सिपाही ने बेहद अभद्र लहजे में आवाज दी, "एई मियाँ जी!"

"मुल्लाजी कहो, मुल्लाजी। कहाँ चले?"

"आपने कुछ फर्माया?" हमदम साहब ने रुककर बेहद संजीदगी से पूछा।

सिपाही हँसने लगे, "अबे, शायरी बोलता है!"

हँस चुकने के बाद एक सिपाही ने गंभीरता से पूछा, "कहाँ जा रहे हो ?"

"जी ? घर जा रहा हूँ जनाब।"

"कहाँ से आए हो ?"

"जी अस्पताल से। चोट लग गई थी।"

"हूँ। तभी। तुम्हें मालूम नहीं है कि यहाँ कर्फ्यू लगा है ?"

"जी कर्फ्यू ? मगर मैं तो अपने घर ही जा रहा हूँ बन्दापरवर।"

"कहा न कर्फ्यू लगा है। जाओगे कैसे ? पास है कर्फ्यू का ?"

"जी पास तो नहीं है। मगर मैं तो—"

"मियाँजी, मेरी सलाह मानो, यहीं से वापस हो लो। मुसीबत में पड़ जाओगे। हम तो भलमनसाहत से पेश आ रहे हैं, आगे डंडे से ही बात होगी।"

"जी !" हमदम साहब परेशान हो आए, "अगर मैं यहाँ—मेरा मतलब है कर्फ्यू पास तो बनता होगा ? देखिए मैं—" हमदम साहब ने चाहा कि वे बता दें कि वे एक मशहूर कौमी शायर हैं। यहाँ तक कि उन्होंने खुद गवर्नर साहब बहादुर के रूबरू बैठकर अपनी नज्में सुनाई हैं पर वे रुक गए।

सिपाही शायद उतना बुरा नहीं था। समझाता हुआ बोला, "मुल्लाजी, पहले बनता था, अब यहाँ नहीं बनता। अब मेरठ से ही बनवाना पड़ेगा। डी० एम० के यहाँ चले जाओ, बन जायेगा। तुम तो अस्पताल में थे इसलिए तुम्हारा केस मजबूत है।"

हमदम साहब ने सिपाहियों को एक बार फिर देखा। उन्हें लगा जो कहा गया है, उसे मान लेने के अलावा रास्ता नहीं है।

हालात मेरठ में भी बेहतर नहीं थे। बल्कि मेरठ-गाजियाबाद सड़क के बस अड्डे से बहुत पहले ही उन्हें रोक दिया गया, "कौन है ? कहाँ जा रहा है ? पास है ?" उन्हें शहर की सीमा से बाहर ही इस तरह घेर लिया गया जैसे वे कोई भागे हुए मुजरिम हों।

बेहद हताशा और अपमान के साथ अपनी पसलियों पर चढ़ा पलस्तर कई बार प्रदर्शित करने के बाद सिर्फ इतना हुआ कि उन सिपाहियों ने उन्हें वापस जाने की इजाजत दे दी। वापस ? लेकिन कहाँ ? वतन और कौमी फरायज़ के बाद पहली बार उन्हें अपने घर की याद आई। इस साल चूने में

पीली मिट्टी मिलाकर पुताई कराने के बाद दरवाजों पर तेलवाला नीला रंग उन्होंने खुद लगाया था। दरवाजे अच्छे चमकने लगे थे। उनकी चिड़चिड़ी बीवी उनसे चाहे जैसे पेश आती हो, पड़ोस की हर औरत पर उसने उनकी शायरी और गवर्नर साहब से उनके ताल्लुकात का रोब गालिब कर रखा था।

पिछले बरस छब्बीस जनवरी के मौके पर उनकी बहुत कोशिशों के बाद गवर्नर की कोठी पर होनेवाले मुशायरे का निमन्त्रण सूचना विभाग ने दे दिया था। मुशायरेवाले दिन शाम कोई चार बजे गवर्नर के यहाँ होनेवाली चाय-पार्टी में शिरकत का मौका भी उन्हें मिला था। इस चाय-पार्टी में शामिल होने का गौरव वे कभी नहीं भूल सकते। कितने बड़े-बड़े लोग थे वहाँ, पुलिस के अफसर तमगे चमकाते हुए, बड़े-बड़े हाकिम, अदब से खड़े नौकर, बेहतरीन मेजपोशों पर सजी हुई उम्दा मिठाइयाँ। पैरों के नीचे मोटे कालीन जैसी घास—

हमदम साहब के बच्चों ने बहुत देर जिरह करके उनसे हर मिठाई की शक्ल और जायके का परिचय लिया था। इसके बाद बच्चे मिट्टी और पत्थर के टुकड़ों की मिठाई बना लेते और ईंटों पर कोई कागज बिछाकर उन्हें मेजें मान लेते। इस तरह गवर्नर के चाय-पान का खेल वे लोग बहुत दिन तक खेलते रहे थे।

गोश्त बेचनेवाला मुन्ना उन्हें इस दावत के बाद से बहुत महत्त्वपूर्ण और सम्मानित व्यक्ति मानने लग गया था। मक्खियों से भरे चबूतरे पर बैठाकर वह उन्हें चाय पीने को मजबूर कर देता था। जिस बनिए से वे राशन लाते थे उसे भी बहाने-बहाने उन्होंने सब कुछ बता दिया था। वह राशन की दूकान का लाइसेन्स चाहता था। उसने दो बार उन्हें रोककर ठंडे शरबत की बोतल पिलाई थी।

इस वक्त इससे ज्यादा कुछ उन्हें याद नहीं आया। लगा, इस बीच घर से बाहर एक जमाना गुजर चुका है और याददाश्त में काफी धुँधलापन आ गया है। न चाहते हुए भी उन्होंने एक बड़ा फैसला कर लिया। वे गवर्नर साहब से मिलेंगे। हालाँकि नंगे बदन पर चढ़े पलस्तर के ऊपर लटकाया कुर्ता बहुत बेढंगा लग रहा था, पर ऐसे ही सही। कप्तान ने यह एक मेहरबानी जरूर कर दी थी कि चलते वक्त उन्हें अपना एक कुर्ता और पायजामा

भी दे दिया था। पता नहीं सरकारी खजाने से या अपनी तरफ से, उसने जो सौ रुपये उन्हें दिए थे उसमें से अभी बहुत थोड़े ही खर्च हुए थे। अपनी इस वक्त की समस्या के लिए गवर्नर साहब से मुलाकात कुछ ऐसी थी जैसे चींटी मारने के लिए तोप का इस्तेमाल किया जाय लेकिन इसके अलावा उन्हें और कोई रास्ता दिखाई नहीं दिया।

इस बार गवर्नर साहब की कोठी उन्हें उतनी सुहानी नहीं लगी। बड़े फाटक के सन्तरी ने उन पर ध्यान भी नहीं दिया, पर आगे जहाँ एक छोटा सरोवर बना था उससे कुछ पहले ही दो आदमियों ने उन्हें टोका।

गनीमत ही है कि उन्होंने थोड़ी शिष्टता बरती और कोठी के स्वागत कक्ष की तरफ इशारा कर दिया। स्वागत कक्ष में चार-पाँच लोग बहुत जोश के साथ किसी बात पर बहस कर रहे थे। हमदम साहब बहुत अदब से आदाब करके एक किनारे खड़े हो गए।

दरअसल मामला किसी की छुट्टी का था जिसकी फाइल गुम थी। जब वे लोग बहस से करीब-करीब थक गए तब उनमें से एक ने हमदम साहब की तरफ ध्यान दिया, "कहिए ?"

"आदाब हुजूर, मुझे हमदम मलियानवी कहते हैं। पिछले बरस छब्बीस जनवरी के मुशायरे में हुजूर ने इस नाचीज को याद फर्माया था।"

"जी। अच्छा। बैठिए।" उसने कहा।

हमदम साहब थोड़ा अटपटे ढंग से कुर्सी में धँसे और पसलियों में उभर आई पीड़ा की वजह से थोड़ी-सी बिगड़ गई मुस्कराहट के साथ बोले, "जनाब, अस्पताल से आ रहा हूँ। एक अजब-सा हादसा हो गया था।"

अस्पताल के नाम पर वह आदमी थोड़ा संकुचित हो गया, "क्या हो गया था ?"

"क्या बताऊँ हुजूर, बदकिस्मती मेरी कहिए। जनाब, इसी सिलसिले में हजरत आरिफ साहब से नयाज हासिल करना चाहता था।"

"ओह !" वह आदमी समझा हमदम साहब इलाज के लिए मदद माँगने आए हैं। उसने सहानुभूति दिखाते हुए कहा, "गवर्नर साहब तो इस वक्त कहीं जा रहे हैं। आप स्वास्थ्यमन्त्री जी से मिल लीजिए।"

"जी ?"

"चाहें तो मैं एक स्लिप दे देता हूँ।"

"जी शुक्रिया। मगर जिस काम से मैं जनाब गवर्नर साहब हुजूर से मिलना चाहता हूँ—मेरा मतलब है मुझे दरअसल कुछ अर्ज करना है।"

"किस सिलसिले में ? आप मुझे बताएँ।" उस आदमी ने कहा।

हमदम साहब को थोड़ा संकोच हुआ फिर वे धीरे-धीरे बताने लगे, "हुजूर, बात ये है कि मैं मलियाना का रहनेवाला हूँ—जी हाँ, वही मलियाना जहाँ आजकल कर्फ्यू लगा हुआ है। बल्कि जनाब, मैं क्या कहूँ, मैं उन दो लोगों में से एक हूँ जिन्हें बाकी सौ-डेढ़ सौ लोगों के साथ गाजियाबाद ले जाकर पी० ए० सी० ने गोली मार दी थी।"

"क्या ?" सहसा वह आदमी बौखला गया, "मतलब आप, यानी आपको, मेरा मतलब है—"

"हुजूर, मैं उन्हीं लोगों में से एक हूँ। अल्लाह का शुक्र है मैं बच गया।"

मगर वह आदमी अब आगे की बात सुन नहीं रहा था। बेचैनी से करवट बदलकर उसने कहा, "सुनिए, आप जरा-सा इन्तजार कर लें, मैं बस अभी हाजिर हुआ।"

"बेहतर है हुजूर, बेहतर है।"

"आपको चाय भिजवाता हूँ।"

"जी नहीं। शुक्रिया। एक गिलास पानी मिल जाता—"

"पानी ?" उस आदमी ने किसी को बुलाकर उन्हें पानी और चाय देने को कहा और कोठी के अन्दर चला गया।

दुबारा वह काफी देर में ही वापस आया। तब तक पानी तो आ गया था, चाय नहीं आई थी। उस आदमी ने आते ही कहा, "महामहिम जाने-वाले हैं लेकिन वे दो मिनट आपसे मिलना चाहते हैं।"

"या खुदा !" उन्होंने छत की तरफ देखकर कहा, "तेरी मेहरबानी !"

गवर्नर साहब अपने दफ्तर में थे। उन्होंने हमदम साहब को बहुत इज्जत से अपने करीब की सेटी पर बैठा लिया। हमदम साहब का गला भर आया, जिस सरकार के सबसे बड़े हाकिम ऐसे रहमदिल और मेहरबान हों उस सरकार के खिलाफ लोग ऐसी-ऐसी बातें करें ? वे देर तक बिना कुछ बोले डबडबाई आँखों उन्हें घूरते रहे। गवर्नर उनकी मानसिक स्थिति

समझ गए। थोड़े क्षणों के बाद बहुत नरमी से उन्होंने पूछा, "कैसे हैं?"

"जी आपकी दुआ है हुजूर, जिन्दा हूँ। वैसे हुजूर, मैं इसे भी खुदा की मर्जी मानता हूँ कि उसने मुझे जिन्दगी के चन्द दिन और बख्शे हैं ताकि मैं फिरकापरस्तों और मुल्क के दुश्मनों के खिलाफ अपनी आवाज उठा सकूँ। जनाब, अब देखिए, यह जो गाजियाबादवाला हादसा हुआ है इसकी जिम्मेदारी भी सरकार पर डाली जा रही है। जबकि सब जानते हैं कि इस वक्त हमारे वतन के लीडरान के खिलाफ खुलेआम साजिश हो रही है जनाब।"

गवर्नर ने उनके सामने धीरे से एक अखबार रख दिया। अखबार में गाजियाबाद के हादसे की सफाई में मुख्यमंत्री का बयान छपा था। उनका कहना था कि छिहत्तर आदमियों की हत्या सरासर झूठ है।

पढ़ते-पढ़ते हमदम साहब जोश में आ गए, "ये ठीक किया जनाब। इस साजिश का ऐसे ही जवाब देना चाहिए था।"

"आपने आगे पढ़ लिया?" गवर्नर ने पूछा।

हमदम साहब बाकी खबर भी पढ़ने लगे। पढ़ते-पढ़ते वे बेचैन होने लगे। खबर पढ़ना खत्म करके वे फटी आँखों गवर्नर को घूरने लगे। देर बाद ही उनकी आवाज फूटी, "जनाब—मैं—खुदा कसम जनाब, ये सब झूठ है। सफेद झूठ। मैं—मेरा मतलब दो बरस पहले पाकिस्तान से शोअरा आए थे, उनसे जरूर मिला था मगर खुदा गवाह है मेरा किसी पाकिस्तानी जासूस से ताल्लुक—मगर हुजूर, सुनिए, क्या आप भी इस बयान पर यकीन करते हैं? मैं तो जनाब, रऊफ को भी खूब जानता हूँ। वो साइकिल का पंचर ठीक नहीं बना पाता, गैरकानूनी असलहा क्या बनाएगा—जनाब—मैं—ये तो हद है हुजूर, ये तो ठीक है कि—मगर हुजूर, आप तो मुझे जानते हैं जनाब, कौमी यकजहती पर पिछले बरस मेरी नज्म पर आपने खुद दाद दी थी हुजूर, यकीन मानिए ये सब झूठ है जनाब, सफेद झूठ—"

गवर्नर ने हाथ बढ़ाकर धीरे से उनका कंधा दबाया। और कोई वक्त होता तो हमदम साहब इस अनुग्रह से गद्‌गद हो उठते और इस गौरव और सम्मान का बखान वे महीनों करते पर इस वक्त वह हाथ वहीं पड़ा था जहाँ जख्म था और इस स्पर्श से उन्हें गौरव नहीं एक गहरा दर्द महसूस हुआ जो उनके कलेजे तक उतर गया। □□